

बिहार राज्य विद्युत बोर्ड, पटना एवं अन्य

बनाम

ग्रीन रबर इंडस्ट्रीज एवं अन्य

24 नवम्बर, 1989

[न्यायमूर्ति के.एन. सैकिया एवं न्यायमूर्ति एम. फ़ातिमा बीवी]

*विद्युत आपूर्ति अधिनियम, 1948—धाराएँ 5-7, 23 और 49—उपभोक्ता—न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का भुगतान करने की देयता—समझौता—उसकी वैधता।*

उत्तरदाता फर्म ने 60 के.वी.ए. विद्युत आपूर्ति के लिए अपीलकर्ता विद्युत बोर्ड को आवेदन दिया और बोर्ड ने इस संबंध में उत्तरदाता फर्म के साथ एक समझौता किया तथा 13.4.1981 को विद्युत कनेक्शन प्रदान किया। इसके पश्चात् उत्तरदाता फर्म ने 60 के.वी.ए. से 45 के.वी.ए. तक विद्युत में कमी करने के लिए आवेदन किया और 2 मई, 1981 को एक नया समझौता किया गया तथा 45 के.वी.ए. का नया कनेक्शन 29.5.1981 को दिया गया। उत्तरदाता का मामला यह है कि उसने 19.6.1981 को विद्युत काटने के लिए विद्युत बोर्ड से अनुरोध किया था। फर्म को न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क के लिए चार महीनों, अर्थात् जून से सितम्बर 1981 तक, के बिल प्राप्त हुए। फर्म ने यह कहते हुए बिल का भुगतान करने की देयता से इंकार किया कि उक्त चार महीनों की अवधि के दौरान उसने कोई विद्युत उपभोग नहीं किया। परिणामस्वरूप, फर्म द्वारा बिल का भुगतान न करने पर बोर्ड ने 28.9.1981 को विद्युत कनेक्शन काट दिया। अंततः फर्म को जून से अगस्त 1981 की अवधि के लिए 22,951.50 रुपये का बिल प्राप्त हुआ। बिल का भुगतान न करने पर बोर्ड ने प्रमाणपत्र अधिकारी को अनुरोध भेजा, जिन्होंने 7.7.1981 को फर्म को नोटिस भेजा। प्रमाणपत्र अधिकारी ने यह दलील अस्वीकार कर दी कि फर्म बिल का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी नहीं है और फर्म की संपत्ति कुर्क करने की कार्यवाही शुरू कर दी। इस कार्यवाही से असंतुष्ट होकर उत्तरदाता फर्म ने उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर की, जिसमें बिलों के साथ-साथ प्रमाणपत्र की कार्यवाही को भी निरस्त करने की प्रार्थना की गई।

उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि चूँकि बोर्ड ने स्वयं कनेक्शन काट दिया था, इसलिए सितम्बर 1981 के बाद की अवधि के लिए वह किसी भी प्रकार के शुल्क का हकदार नहीं था और यह बोर्ड के लिए यह तर्क देना भी उचित नहीं था कि समझौते की धारा 9 के अंतर्गत न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क के समझौते को समझौते की तिथि से दो वर्ष की अवधि समाप्त होने से पहले किसी भी पक्ष द्वारा समाप्त नहीं किया जा सकता। तदनुसार,

उच्च न्यायालय ने बिलों के साथ-साथ प्रमाणपत्र की कार्यवाही को भी निरस्त कर दिया, परंतु जुलाई, अगस्त और सितम्बर 1981 के लिए देय शुल्क को सुरक्षा धनराशि के विरुद्ध समायोजित करने की अनुमति दी।

अतः विद्युत बोर्ड ने विशेष अनुमति प्राप्त करने के बाद यह अपील दायर की है।

अपील को स्वीकार करते हुए, इस न्यायालय द्वारा—

अभिनिर्धारित: किसी उपभोक्ता के साथ किया गया आपूर्ति-समझौता बोर्ड के साथ उसके संबंध को मुख्यतः संविदात्मक बनाता है, यद्यपि आपूर्ति का आधार वैधानिक माना जाता है, न कि पूर्णतः संविदात्मक। ऐसे मामलों में जहाँ इस प्रकार के समझौते किए जाते हैं, यह माना जाता है कि उनकी शर्तें उपभोक्ता और बोर्ड के बीच परस्पर विचार-विमर्श से तय की गई हैं और जब तक विशेष रूप से अन्यथा प्रावधान न हो, यह समझौता सामान्यतः उसी उपभोक्ता को बाध्य करता है जिसके साथ यह किया गया है।

यह समझौता युक्तिसंगत और वैध था तथा उत्तरदाता फर्म को आपूर्ति विच्छेद किए जाने से यह समाप्त नहीं हुआ। अतः न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का भुगतान करने की देयता अनुबंध की अवधि समाप्त होने तक बनी रही। इसलिए बोर्ड को उस आधार पर बिल प्रस्तुत करने और विधि के अनुसार उसकी वसूली करने का अधिकार था।

दीवानी अपीलीय क्षेत्राधिकार: 1987 की दीवानी अपील संख्या 220

पटना उच्च न्यायालय द्वारा 1986 की दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद संख्या 1915 में दिनांक 22.05.1986 को पारित निर्णय एवं आदेश से।

अपीलकर्ताओं की ओर से: सोली जे. सोराबजी तथा रंजीत कुमार।

उत्तरदाताओं की ओर से: बी. डी. शर्मा तथा एस. के. जैन।

न्यायालय का निर्णय निम्न द्वारा दिया गया—

न्यायमूर्ति के. एन. सैकिया: यह विशेष अनुमति से दायर अपील पटना स्थित उच्च न्यायालय के 22 मई, 1986 के उस निर्णय से उत्पन्न हुई है, जो दीवानी रिट क्षेत्राधिकार वाद संख्या 1915 सन् 1986 में पारित किया गया था, जिसके द्वारा अपीलकर्ताओं द्वारा उत्तरदाताओं से न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क की माँग करते हुए जारी किए गए बिलों को निरस्त कर दिया गया था।

अपीलकर्ता बिहार राज्य विद्युत बोर्ड, पटना, जिसे आगे 'बोर्ड' कहा गया है, ने

उत्तरदाता मेसर्स ग्रीन रबर इंडस्ट्रीज, एक साझेदारी फर्म, जिसे आगे 'फर्म' कहा गया है, के साथ 26 जुलाई, 1978 के आवेदन पर 60 किलोवाट बिजली की आपूर्ति के लिए एक समझौता किया और 13 अप्रैल, 1981 को बिजली कनेक्शन दिया। फर्म ने बाद में 60 किलोवाट के बजाय 45 किलोवाट बिजली के लिए आवेदन किया और आवश्यक राशि 2700 रुपये जमा की, जिसके बाद 2 मई, 1981 को एक नया समझौता किया गया। 29 मई, 1981 को फर्म को 45 के.वी.ए. का नया विद्युत् कनेक्शन दिया गया। फर्म के अनुसार, उसने 19.6.1981 को बोर्ड से कनेक्शन काटने का अनुरोध किया था। फर्म को जून, जुलाई, अगस्त और सितंबर 1981 के महीनों के लिए न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क के बिल प्राप्त हुए, यद्यपि उसके अनुसार उस अवधि में उसके द्वारा कोई विद्युत् उपभोग नहीं किया गया था। बिलों का भुगतान न किए जाने के कारण, बोर्ड के अनुसार, 28 सितंबर, 1981 को आपूर्ति विच्छेदित कर दी गई। अंततः फर्म को अक्टूबर, 1981 में जून 1981 से अगस्त 1981 तक की अवधि के लिए न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क के संबंध में 22,951.50 रुपये की मांग सूचना प्राप्त हुई। फर्म द्वारा उक्त राशि का भुगतान न किए जाने पर, बोर्ड ने प्रमाण-पत्र अधिकारी को एक अनुरोध भेजा, जिसने 6 जुलाई, 1984 को फर्म को नोटिस जारी किया। फर्म की इस दलील को अस्वीकार करते हुए कि वह भुगतान के लिए उत्तरदायी नहीं थी, प्रमाण-पत्र अधिकारी ने फर्म की संपत्ति की कुर्की का आदेश पारित किया, जिसके परिणामस्वरूप फर्म ने भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 और 227 के अंतर्गत पटना स्थित उच्च न्यायालय में रिट याचिका दायर की, जिसमें बिलों के साथ-साथ प्रमाण-पत्र की कार्यवाही को निरस्त करने की प्रार्थना की गई।

उच्च न्यायालय के समक्ष बोर्ड ने यह तर्क प्रस्तुत किया कि फर्म समझौते की शर्तों के अनुसार न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी थी, और आपूर्ति का विच्छेदन स्वयं उन्हीं शर्तों के अंतर्गत किया गया था।

उच्च न्यायालय ने यह मत व्यक्त किया कि चूँकि विद्युत बोर्ड ने स्वयं ही विद्युत आपूर्ति विच्छेदित कर दी थी, इसलिए वह सितम्बर, 1981 के पश्चात की अवधि के लिए किसी भी प्रकार के शुल्क का अधिकारी नहीं था और यह भी कि अनुबंध की धारा 9 के अधीन, अनुबंध की तिथि से दो वर्ष की अवधि समाप्त होने से पूर्व, किसी भी पक्ष के लिए न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क संबंधी अनुबंध को समाप्त करना संभव नहीं था। इस दृष्टिकोण के आधार पर उच्च न्यायालय ने बिलों तथा प्रमाणपत्र वसूली कार्यवाही, दोनों को निरस्त कर दिया, किन्तु जुलाई, अगस्त तथा सितम्बर, 1981 के महीनों के शुल्क को सुरक्षा जमा राशि

के विरुद्ध समायोजित किए जाने की अनुमति प्रदान की।

अपीलकर्ताओं की ओर से विद्वान अधिवक्ता श्री सोली जे. सोराबजी ने *अन्य बातों के साथ* यह प्रस्तुत किया कि समझौते के अंतर्गत फर्म न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का भुगतान करने के लिए उत्तरदायी थी, चाहे समझौते की अवधि के दौरान ऊर्जा का उपभोग किया गया हो या नहीं; तथा फर्म द्वारा ऊर्जा बिलों का भुगतान न करने के कारण आपूर्ति का विच्छेदन किए जाने से उस दायित्व पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता; और यह कि उच्च न्यायालय ने यह मानने में त्रुटि की कि बोर्ड द्वारा स्वयं ऊर्जा आपूर्ति लाइन का विच्छेदन किए जाने के बाद वह न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का दावा नहीं कर सकता था।

नियमित सेवा के साथ-साथ प्रतिस्थापित सेवा की विधि से नोटिस दिए जाने के बावजूद, उत्तरदाताओं की ओर से कोई भी उपस्थित नहीं हुआ।

निर्णय हेतु प्रश्न यह है कि इस तथ्य के बावजूद कि 28 सितंबर, 1981 को आपूर्ति लाइन विच्छेदित कर दी गई थी, क्या फर्म समझौते के अंतर्गत न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का भुगतान करने के लिए फिर भी उत्तरदायी थी। इसका उत्तर स्वयं समझौते तथा विधि के प्रासंगिक प्रावधानों पर निर्भर करता है। समझौते की धारा 4 इस प्रकार कहती है:

“उपभोक्ता, बोर्ड द्वारा समय-समय पर बनाए गए और लागू किए गए टैरिफ के अनुसार, उपभोक्ता पर लागू उपयुक्त दरों पर, बोर्ड को उस ऊर्जा के लिए भुगतान करेगा जो आपूर्ति की गई और पंजीकृत की गई हो अथवा जिसे आपूर्ति किया हुआ माना गया हो; वर्तमान में लागू टैरिफ, सुविधा हेतु, इस समझौते की अनुसूची में दर्शाए गए हैं। ऐसा संदर्भ, आगे वर्णित धारा 15 के प्रावधानों के अधीन रहेगा।

यह प्रावधान रहते हुए कि उपर्युक्त कही गई किसी भी बात के बावजूद, आगे वर्णित धारा 13 के प्रावधानों के अधीन, उपभोक्ता को बोर्ड द्वारा समय-समय पर बनाए गए और लागू किए गए उपर्युक्त टैरिफ में निर्दिष्ट न्यूनतम शुल्क का भुगतान करना होगा, चाहे उस सीमा तक ऊर्जा का उपभोग किया गया हो या नहीं। (ऐसे न्यूनतम शुल्कों को इस समझौते में अन्य स्थानों पर ‘न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क’ कहा गया है।)

न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का वह भाग, क्योंकि मासिक रूप से बिल नहीं किया जाता, उसके लिए आकलन सामान्यतः वर्ष के अंत में किया जाएगा, जो 1 अप्रैल से प्रारंभ होकर अगले वर्ष की 31 मार्च को समाप्त होगा, जो बोर्ड का वित्तीय वर्ष है। यदि इस अवधि के बीच कोई समझौता किया

जाता है, तो न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क के उक्त भाग को उस अवधि के अनुपात में समायोजित किया जाएगा जिसके लिए उपभोक्ता जुड़ा रहता है। प्रत्येक वर्ष के लिए न्यूनतम सुनिश्चित उपभोग या उसके किसी भाग के खाते का कोई भी बिल, प्रत्येक वर्ष जून के अंत तक प्रस्तुत किया जाएगा।”

उपरोक्त खंड को पढ़ने से यह स्पष्ट हो जाता है कि न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क उपभोक्ता द्वारा देय होगा, चाहे उस मात्रा में ऊर्जा का उपभोग हुआ हो या नहीं। वास्तव में, यदि शुल्क केवल वास्तव में उपभोग की गई ऊर्जा पर निर्भर होता, तो ऐसे प्रावधान की कोई आवश्यकता नहीं होती।

समझौते की धारा 5 का आशय निम्नलिखित है:

“(क) मीटर की रीडिंग बोर्ड द्वारा प्रत्येक माह एक बार अथवा ऐसे अन्य अंतरालों या समयों पर ली जाएगी, जैसा कि बोर्ड उपयुक्त समझे, और बोर्ड का मीटर रीडर ऐसी रीडिंग लेने के उद्देश्य से सभी युक्तिसंगत समयों पर उपभोक्ता के परिसर में प्रवेश का अधिकार रखेगा। बोर्ड, युक्तिसंगत समय के भीतर, मीटरों की रीडिंग के अनुसार तथा न्यूनतम सुनिश्चित शुल्कों के अधीन, माह के दौरान उपभोग की गई ऊर्जा के लिए उपभोक्ता को बिल प्रदान करेगा। उपभोक्ता, बोर्ड द्वारा समय-समय पर बनाए गए और लागू किए गए टैरिफ की शर्तों के अनुसार, उसमें निर्दिष्ट नियत तिथि के भीतर उक्त बिल की राशि का भुगतान करेगा।

(ख) यदि उपभोक्ता इस समझौते के अंतर्गत देय किसी भी बिल की राशि, ऊपर उल्लिखित धारा 5(क) में संदर्भित बिल में निर्दिष्ट नियत तिथि के भीतर अदा करने में विफल रहता है, तो वह बोर्ड द्वारा समय-समय पर बनाए गए और लागू किए गए टैरिफ में दी गई दर से अधिभार का भुगतान करेगा। यदि ऐसे बिल की राशि, उसमें निर्दिष्ट नियत तिथि के बाद भी अदा नहीं होती है, तो बोर्ड उपभोक्ता को कम से कम 7 स्पष्ट दिनों का नोटिस देकर आपूर्ति विच्छेदित कर सकता है। सेवा का पुनः संयोजन केवल पूर्ण भुगतान प्राप्त होने पर ही किया जाएगा, जिसमें पुनः संयोजन की तिथि तक की सभी बकाया देयताएँ तथा सेवा के विच्छेदन और पुनः संयोजन के कार्य हेतु शुल्क शामिल होंगे।”

इस धारा के अवलोकन से इसमें कोई संदेह नहीं रह जाता कि यदि विधि के अनुसार प्रस्तुत किया गया कोई बिल, उसमें निर्दिष्ट नियत तिथि के बाद भी अवैतनिक रहता है, तो बोर्ड उपभोक्ता को कम से कम 7 स्पष्ट दिनों का नोटिस देकर आपूर्ति विच्छेदित कर सकता है।

इस मामले में नोटिस दिए जाने को लेकर कोई विवाद नहीं है।

समझौते की धाराएँ 8 और 9 उसकी अवधि तथा समाप्ति से संबंधित हैं। समझौते की धारा 8 इस प्रकार कहती है:

"यह समझौता आम तौर पर आपूर्ति शुरू होने की तारीख से कम से कम दो साल की अवधि के लिए लागू रहेगा (उन असाधारण मामलों को छोड़कर जिनमें बोर्ड की लिखित सहमति ली जाएगी), यानी ..... और उसके बाद यह समझौता समाप्त होने तक साल-दर-साल जारी रहेगा जैसा कि नीचे बताया गया है।

टिप्पणी: यदि विद्युत आपूर्ति प्रारम्भ होने की तिथि इस अनुबंध के निष्पादन की तिथि के पश्चात की कोई तिथि हो, तो बोर्ड को यह अधिकार होगा कि वह उपभोक्ता को पूर्व सूचना देकर इस अनुच्छेद में रिक्त छोड़े गए स्थान में उक्त तिथि भर दे। उपभोक्ता अपने पास उपलब्ध अनुबंध की प्रति प्रस्तुत करके बोर्ड से उस तिथि को भरवा सकता है।"

खंड 9 में प्रावधान है:

"(क) उपभोक्ता ऊर्जा की आपूर्ति के प्रारम्भ की तिथि से दो वर्ष की अवधि की समाप्ति से पूर्व इस समझौते का निर्धारण (समाप्ति) करने के लिए स्वतंत्र नहीं होगा। उक्त अवधि के पश्चात, उपभोक्ता बोर्ड को इस संबंध में लिखित रूप में कम से कम एक कैलेंडर माह की पूर्व सूचना देकर, किसी भी तिथि से प्रभाव के साथ इस समझौते का निर्धारण कर सकता है, और ऐसी सूचना की अवधि की समाप्ति पर यह समझौता समाप्त और निर्धारित हो जाएगा, बिना किसी ऐसे अधिकार को प्रभावित किए जो तब तक बोर्ड के पक्ष में इसके अधीन अर्जित हो चुके हों; बशर्ते कि उपभोक्ता, बोर्ड की पूर्व सहमति से, किसी भी समय इस समझौते का हस्तांतरण या प्रत्यायोजन किसी अन्य व्यक्ति के पक्ष में कर सकेगा, और ऐसे हस्तांतरण के समझौते पर हस्ताक्षर होने पर वह हस्तांतरणकर्ता तथा बोर्ड पर सभी दृष्टियों से उसी प्रकार बाध्यकारी होगा मानो हस्तांतरणकर्ता मूल रूप से उपभोक्ता के स्थान पर इस समझौते का पक्षकार रहा हो, और उसके पश्चात उपभोक्ता उससे संबंधित या उसके संबंध में समस्त दायित्वों से मुक्त हो जाएगा।

(ख) यदि उपभोक्ता की आपूर्ति इस समझौते के अंतर्गत बोर्ड द्वारा अपने

अधिकारों का प्रयोग करते हुए काट दी जाती है और/या उपभोक्ता, ऊपर दी गई अनिवार्य आपूर्ति की शेष अवधि या सूचना की अवधि—जो भी अधिक हो—के भीतर विधि के अनुसार पुनः संयोजन के लिए आवेदन नहीं करता है, तो उसे उपर्युक्त खंड 9(क) के अर्थों में, समझौते के निर्धारण हेतु, विच्छेदन की तिथि को सूचना दिए जाने के रूप में माना जाएगा; और उपर्युक्त अनिवार्य आपूर्ति की शेष अवधि या सूचना की अवधि—जो भी अधिक हो—की समाप्ति पर, यह समझौता उसी प्रकार समाप्त और निर्धारित हो जाएगा जैसा कि ऊपर वर्णित है।”

अतः यह स्पष्ट है कि उपभोक्ता दो वर्ष की अवधि की समाप्ति से पूर्व समझौते का निर्धारण (समाप्ति) नहीं कर सकता, और इस मामले में ऐसा कोई तथ्य नहीं है जिससे यह सिद्ध हो कि उसने उक्त अवधि की समाप्ति के पश्चात पूर्व सूचना देकर ऐसा किया हो। वास्तव में, आपूर्ति बोर्ड द्वारा चूक के कारण काट दी गई थी। ऐसी स्थिति में इसका समझौते पर क्या प्रभाव होगा?

यह देखा जाता है कि यदि बोर्ड, अनुबंध के अधीन अपनी शक्तियों का प्रयोग करते हुए विद्युत आपूर्ति विच्छेदित कर देता है, तो उपभोक्ता के लिए यह खुला रहता है कि वह उपर्युक्त अनिवार्य आपूर्ति-अवधि अथवा सूचना-अवधि, जो भी अधिक हो, की शेष अवधि के भीतर विधि के अनुसार पुनः संयोजन के लिए आवेदन करे। यदि वह ऐसा नहीं करता, तो यह माना जाएगा कि उसने विच्छेदन की तिथि को ही उपर्युक्त अनुच्छेद 9(क) के अनुसार अनुबंध की समाप्ति हेतु सूचना दे दी है और अनिवार्य आपूर्ति-अवधि अथवा सूचना-अवधि, जो भी अधिक हो, की शेष अवधि समाप्त होने पर अनुबंध समाप्त और निरस्त हो जाएगा। अतः यह स्पष्ट है कि वर्तमान मामले में उपभोक्ता के दोष के कारण 28.9.1981 को विद्युत आपूर्ति विच्छेदित कर दी गई थी और उपभोक्ता ने पुनः संयोजन के लिए कोई आवेदन भी नहीं किया था; इसलिए यह माना जाएगा कि उसने अनुच्छेद 9(क) के अनुसार विच्छेदन की तिथि को ही अनुबंध की समाप्ति के लिए सूचना दे दी थी और अनुबंध को सूचना-अवधि की समाप्ति पर अथवा अनिवार्य आपूर्ति-अवधि की समाप्ति पर, जो भी बाद में हो, समाप्त माना जाएगा। नया अनुबंध 4 मई, 1981 को निष्पादित हुआ था, अतः उसकी दो वर्ष की अवधि 1 मई, 1983 को समाप्त होती। चूँकि विद्युत आपूर्ति का विच्छेदन 28 सितम्बर, 1981 को हुआ था, इसलिए मानी गई सूचना की अवधि अनुबंध के अधीन अनिवार्य आपूर्ति-अवधि समाप्त होने से सात दिन पूर्व ही समाप्त हो गई थी और इस कारण अनुबंध को केवल 1 मई, 1983 को ही समाप्त माना जाएगा। इस अवधि के दौरान उपभोक्ता पर न्यूनतम गारंटीकृत शुल्क का भुगतान करने का दायित्व जारी माना जाएगा।

श्री सोली जे. सोराबजी प्रस्तुत करते हैं, और हमारा भी यह मत है कि उच्च

न्यायालय ने समझौते में निहित इस महत्वपूर्ण शर्त की उपेक्षा की, जो दोनों पक्षों पर बाध्यकारी थी। तथापि, चूँकि उत्तरदाता हमारे समक्ष उपस्थित नहीं हैं, इसलिए अपीलकर्ता बोर्ड की ओर से विद्वान अधिवक्ता द्वारा न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क के संबंध में प्रस्तुत दलीलों की युक्तिसंगतता पर विचार करना आवश्यक नहीं है। प्रश्न यह है कि क्या बोर्ड के पास ऐसा समझौता करने की कोई शक्ति है? यदि हाँ, तो किस सीमा तक?

भारतीय विद्युत अधिनियम, 1910, जिसे आगे 'अधिनियम' कहा गया है, विद्युत ऊर्जा की आपूर्ति और उपयोग से संबंधित कानून प्रदान करता है। अधिनियम की धारा 2(11) में परिभाषित "राज्य विद्युत बोर्ड" से किसी राज्य के संबंध में उस राज्य के लिए विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948 (1948 का 54) की धारा 5 के तहत गठित राज्य विद्युत बोर्ड का तात्पर्य है, और इसमें उक्त अधिनियम की धारा 6 और 7 के तहत उस राज्य में कार्य करने वाला कोई भी बोर्ड शामिल है। अपीलकर्ता बिहार राज्य विद्युत बोर्ड एक बोर्ड है। धारा 2(एच) में परिभाषित "अनुज्ञप्ति प्राप्त" से तात्पर्य भाग II के तहत ऊर्जा आपूर्ति के लिए अनुज्ञप्ति प्राप्त किसी भी व्यक्ति से है। अपीलकर्ता बोर्ड इस प्रावधान के तहत ऐसा ही एक अनुज्ञप्ति प्राप्त है। धारा 2(ग) में परिभाषित "उपभोक्ता" से तात्पर्य ऐसे किसी भी व्यक्ति से है जिसे अनुज्ञप्ति प्राप्त या सरकार द्वारा या इस अधिनियम या उस समय लागू किसी अन्य कानून के तहत जनता को ऊर्जा आपूर्ति करने के व्यवसाय में लगे किसी अन्य व्यक्ति द्वारा ऊर्जा की आपूर्ति की जाती है, और इसमें ऐसा कोई भी व्यक्ति शामिल है जिसका परिसर उस समय ऊर्जा प्राप्त करने के उद्देश्य से अनुज्ञप्ति प्राप्त, सरकार या ऐसे अन्य व्यक्ति के संयंत्रों से जुड़ा हुआ है। इसमें कोई संदेह नहीं है कि उत्तरदाता उपभोक्ता था।

विद्युत (आपूर्ति) अधिनियम, 1948, जिसे आगे 'आपूर्ति अधिनियम' कहा गया है, एक ऐसा अधिनियम है जिसका उद्देश्य विद्युत के उत्पादन और आपूर्ति की प्राप्ति सुनिश्चित करना तथा सामान्यतः विद्युत विकास के अनुकूल उपाय करना और उससे संबंधित सभी सहायक विषयों के लिए प्रावधान करना है।

अधिनियम की धारा 23 की उप-धारा (1) के अंतर्गत, ऊर्जा की आपूर्ति के लिए कोई भी समझौता करते समय अनुज्ञप्ति प्राप्त किसी व्यक्ति के प्रति कोई अनुचित प्राथमिकता नहीं दिखाएगा। अतः यह धारा अनुज्ञप्ति प्राप्त द्वारा ऊर्जा की आपूर्ति के लिए उपभोक्ता के साथ समझौता किए जाने की परिकल्पना करती है। इस प्रकार किया गया समझौता, इसलिए, इस प्रावधान द्वारा परिकल्पित समझौता माना जाएगा। क्या ऊर्जा का उपभोग हुआ हो या न हुआ हो—इससे स्वतंत्र रूप से—न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का भुगतान करने की शर्त युक्तिसंगत और वैध थी? जब ऊर्जा का उपभोग नहीं किया गया हो या कम ऊर्जा का उपभोग किया

गया हो, तो प्रतिफल (विचार) क्या है?

आपूर्ति अधिनियम की धारा 49, अनुज्ञप्तिधारियों के अतिरिक्त अन्य व्यक्तियों को बोर्ड द्वारा विद्युत की बिक्री के लिए प्रावधान करती है। उप-धारा (1) के अंतर्गत, आपूर्ति अधिनियम और इसके अधीन बनाए गए विनियमों के प्रावधानों के अधीन रहते हुए, बोर्ड इस संबंध में किए गए किसी भी विनियम के अनुसार, किसी भी ऐसे व्यक्ति को जो अनुज्ञप्ति प्राप्त न हो, बोर्ड द्वारा उचित समझी गई शर्तों और परिस्थितियों पर विद्युत की आपूर्ति कर सकता है, और इस उद्देश्य के लिए समान शुल्क ढाँचा निर्धारित कर सकता है। इसकी उप-धारा (2) के अंतर्गत, उप-धाराओं (1) और (2) में निहित कोई भी बात, यदि बोर्ड आवश्यक या उपयुक्त समझे, तो किसी अनुज्ञप्ति प्राप्त न होने वाले व्यक्ति को विद्युत की आपूर्ति के लिए भिन्न-भिन्न शुल्क निर्धारित करने की बोर्ड की शक्ति को, किसी क्षेत्र की भौगोलिक स्थिति, आपूर्ति की प्रकृति तथा जिस उद्देश्य के लिए आपूर्ति आवश्यक है, और अन्य किसी भी प्रासंगिक कारक को ध्यान में रखते हुए, कम नहीं करेगी। उप-धारा (2) में बोर्ड द्वारा समान शुल्क निर्धारित करते समय विचार किए जाने वाले कारकों का उल्लेख किया गया है।

यह देखा जाता है कि न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क वसूलने का नियम काफी समय से प्रचलन में है। *लंदन इलेक्ट्रिक सप्लाय कॉरपोरेशन (लिमिटेड) बनाम प्रिडिस*, 18 टी.एल.आर. 64 में, अपीलकर्ता कंपनी और उपभोक्ता के बीच विद्युत आपूर्ति संबंधी समझौते में धारा 4 में यह प्रावधान था कि “उपभोक्ता को स्थापना की तिथि से पाँच वर्ष की अवधि पूर्ण होने पर या उसके बाद, निर्धारित मूल्य पर स्थापना क्रय करने का विकल्प होगा।” धारा 7 में कहा गया था : “उपभोक्ता, चाहे उसने स्थापना का क्रय किया हो या नहीं, प्रत्येक तिमाही में आपूर्ति कंपनी को स्थापना के उपयोग के लिए भुगतान करेगा। व्यापार बोर्ड की इकाई के अनुसार, उक्त परिसरों को प्रदत्त प्रत्येक विद्युत ऊर्जा इकाई के लिए तथा किसी भी वर्ष में न्यूनतम भुगतान प्रत्येक आठ-कैंडल शक्ति वाले दीपक या उसके समकक्ष स्थापना के लिए एक शिलिंग होगा।” मध्य ग्रीष्म से लेकर माइकलमस, 1900 की अवधि के दौरान, प्रतिवादी ने वादी द्वारा आपूर्ति की गई कोई भी विद्युत ऊर्जा उपयोग नहीं की, और प्रश्न यह था कि क्या समझौते के अधीन प्रतिवादी धारा 7 के अनुसार न्यूनतम भुगतान करने के लिए बाध्य था, जबकि वास्तव में उसने उस तिमाही में वादी की कोई विद्युत ऊर्जा उपयोग नहीं की थी। माननीय मुख्य न्यायाधीश ने निर्णय देते हुए कहा कि “यह पर्याप्त रूप से स्पष्ट है कि स्थापना इस शर्त पर की गई थी कि उपभोक्ता को पाँच वर्ष के बाद स्थापना क्रय करने का अधिकार होगा, और उन पाँच वर्षों के दौरान उपभोक्ता को, चाहे विद्युत धारा का वास्तविक उपयोग किया गया हो या नहीं, किराया (न्यूनतम शुल्क) देना होगा। न्यूनतम किराया का वास्तविक उपयोग की गई विद्युत धारा से कोई संबंध नहीं था और यह स्पष्ट था कि मात्र इस तथ्य से कि प्रतिवादी ने कोई विद्युत धारा या बहुत कम विद्युत धारा का उपयोग नहीं किया, मामले पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता।” न्यायमूर्ति चैनल ने सहमति व्यक्त करते हुए कहा कि

“इस धारा का अभिप्राय यह था कि न्यूनतम किराया केवल वास्तविक उपयोग को ही आच्छादित नहीं करता, बल्कि विद्युत धारा के उपयोग के अधिकार को भी आच्छादित करता है। उपभोक्ता को विद्युत धारा के उपयोग के अधिकार के लिए भुगतान करना होता था, भले ही उसने वास्तव में उसका उपयोग न किया हो।”

*सैला बाला बनाम दार्जिलिंग नगरपालिका*, ए.आई.आर. 1936 कलकत्ता 265 में, एक विद्वान एकल न्यायाधीश ने यह माना कि न्यूनतम शुल्क वास्तव में ऐसा शुल्क नहीं था जिसका आधार विद्युत ऊर्जा की खपत हो। यह वास्तव में उस सिद्धांत पर आधारित था कि प्रत्येक उपभोक्ता की स्थापना में अनुज्ञप्ति प्राप्त द्वारा संयंत्र और मुख्य लाइनों में एक निश्चित मात्रा का पूंजीगत व्यय शामिल होता है, जिस पर उसे युक्तिसंगत प्रतिफल प्राप्त होना चाहिए। जब ऊर्जा का वास्तव में उपभोग किया जाता था, तब उसे उपभोग की गई ऊर्जा के भुगतान के रूप में प्रतिफल मिलता था। जब उपभोक्ता द्वारा कोई ऊर्जा उपभोग नहीं की जाती थी, या लंबे समय तक बहुत कम मात्रा में ऊर्जा उपभोग की जाती थी, तब अनुज्ञप्ति प्राप्त को न्यूनतम शुल्क वसूलने की अनुमति थी, किंतु वे न्यूनतम शुल्क वास्तव में उस विशेष उपभोक्ता के लिए किए गए पूंजीगत व्यय पर ब्याज के समान थे।

*नेटेसन, न्यायमूर्ति, नतेसा चेट्टियार बनाम मद्रास राज्य विद्युत बोर्ड*, [1969] 1 मद्रास एल.जे. 69 में, इस प्रश्न का उत्तर देते हुए कि क्या न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का प्रावधान उपभोक्ता की ओर से उल्लंघन की स्थिति में दंड या पूर्व-निर्धारित हर्जाने के रूप में मात्र एक शर्त था या कुछ और, यह मत व्यक्त किया गया कि न्यूनतम निर्धारित शुल्क, उपभोक्ता द्वारा एक निश्चित मात्रा में ऊर्जा का उपभोग न करने पर लगाया गया दंड नहीं था, बल्कि यह उपभोक्ता के लिए ऊर्जा को उसके छोर पर उपलब्ध बनाए रखने के प्रतिफल के रूप में था; यह उस निश्चित सीमा तक एक रियायत थी—निर्धारित दरों पर उपभोग की गई ऊर्जा का भुगतान किया जाना था, और उससे अधिक उपभोग की गई ऊर्जा के लिए केवल भुगतान किया जाना था। समझौते की शर्तों में न्यूनतम वार्षिक शुल्क का वैधानिक आधार अधिनियम की धारा 22 तथा आपूर्ति अधिनियम की धारा 48 में पाया गया। धारा 22 अनुज्ञप्ति प्राप्त पर ऊर्जा की आपूर्ति का दायित्व डालती है। इस धारा के परंतुक में कहा गया है:

“कोई भी व्यक्ति किसी अनुज्ञप्ति प्राप्त से किसी परिसर को, जिसमें पृथक आपूर्ति हो, ऊर्जा की आपूर्ति की मांग करने या उसे जारी रखने का अधिकारी नहीं होगा, जब तक कि वह अनुज्ञप्ति प्राप्त से इस बात पर सहमत न हो जाए कि वह उसे ऐसा न्यूनतम वार्षिक योग देगा जो उसके पूंजीगत व्यय पर उसे युक्तिसंगत प्रतिफल देगा और उन परिसरों के लिए संभावित अधिकतम मांग को पूरा करने हेतु उसके द्वारा वहन किए गए स्थायी खर्चों को कवर करेगा;

तथा देय राशि, मतभेद की स्थिति में, मध्यस्थता द्वारा निर्धारित की जा सकेगी।”

आपूर्ति अधिनियम की धारा 48, अनुज्ञप्ति प्राप्त को उस अधिनियम के अंतर्गत व्यवस्था करने का अधिकार प्रदान करती है।

*वाटकिन्स मेयर एंड कंपनी बनाम जुल्लुंधर इलेक्ट्रिक सप्लाइ कंपनी, ए.आई.आर. 1955 पंजाब 133 (136)* में यह कहा गया कि अधिनियम की संपूर्ण योजना यह दर्शाती है कि न्यूनतम शुल्क के लिए अनुबंध करने का प्रावधान वास्तव में लाइसेंसधारी के व्यय पर उचित प्रतिफल सुनिश्चित करने के लिए किया गया था, और इसी कारण विधि ने इस प्रकार के अनुबंध करने की अनुमति दी। अधिनियम की अनुसूची के खंड 11(क) में, उस समय की स्थिति के अनुसार, यह प्रावधान किया गया था :

“एक अनुज्ञप्ति प्राप्त अपने अनुज्ञप्ति में निर्दिष्ट राशि तथा विधि के अनुसार निर्धारित तरीके से उपभोक्ता से ऊर्जा के लिए न्यूनतम शुल्क ले सकता है, और ऐसा न्यूनतम शुल्क देय होगा, भले ही उस अवधि के दौरान, जिसके लिए यह न्यूनतम शुल्क निर्धारित किया गया है, उपभोक्ता द्वारा कोई ऊर्जा उपयोग में न लाई गई हो।”

अतः न्यायालय ने यह निर्णय दिया कि ऊर्जा की आपूर्ति के लिए किए गए समझौते में न्यूनतम शुल्क के भुगतान से संबंधित शर्त को सम्मिलित किए जाने में कोई अवैधता नहीं थी, और यह भी माना कि यह सिद्ध नहीं किया जा सका कि उक्त शुल्क एक अनुचित वसूली था।

इलाहाबाद उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने *हरि शंकर एवं अन्य बनाम उत्तर प्रदेश राज्य विद्युत बोर्ड एवं एक अन्य, ए.आई.आर. 1974* इलाहाबाद 70 में यह निर्णय दिया कि जब विद्युत आपूर्ति इस आधार पर की जाती है कि उपभोक्ता न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का भुगतान करेगा, तब वह शुल्क दरों के निर्धारण या विद्युत आपूर्ति की शर्तों और परिस्थितियों में से एक माना जाएगा और दरों के निर्धारण में सम्मिलित किया जा सकता है। इसी प्रकार, *मेसर्स भागवान इंडस्ट्रीज प्रा. लि. लखनऊ बनाम उत्तर प्रदेश राज्य विद्युत बोर्ड, लखनऊ, ए.आई.आर. 1979* इलाहाबाद 249 में, एक खंडपीठ ने यह माना कि आपूर्ति अधिनियम की धारा 49 के अंतर्गत नई दर-सारणी द्वारा न्यूनतम उपभोग सुनिश्चित शुल्क के आरोप सहित दरों के पुनरीक्षण के लिए बोर्ड के साथ विद्युत आपूर्ति का किया गया समझौता वैध था। आंध्र प्रदेश उच्च न्यायालय की एक खंडपीठ ने *मोहम्मद अब्दुल गफ्फार बनाम आंध्र प्रदेश विद्युत बोर्ड, (1975) 1 ए.पी.एल.जे. 119* में यह भी निर्णय दिया कि धारा 49(2) में उल्लिखित कारकों के अनुरूप, गैर-घरेलू उपभोक्ताओं द्वारा विद्युत उपभोग के लिए संयोजित भार के

आधार पर मासिक न्यूनतम शुल्क तथा संशोधित दरों का निर्धारण न तो *अधिकारातीत* था और न ही मनमाना।

वर्तमान मामले में उच्च न्यायालय ने *राजेश्वर सिंह बनाम बिहार राज्य*, ए.आई.आर. 1983 पटना 194 पर भरोसा किया, जिसमें यह कहा गया था कि जब विद्युत ऊर्जा का विच्छेदन बोर्ड द्वारा किया जाता है, तब वह न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क की मांग नहीं कर सकता। वह निर्णय केवल उसी मामले के तथ्यों तक सीमित माना जाना चाहिए।

यह सत्य है कि यह समझौता एक मानक प्रारूप का अनुबंध है। इस अनुबंध की मानक शर्तें वर्षों से व्यवस्थित की जाती रही हैं और व्यापक रूप से अपनाई गई हैं, क्योंकि अनुभव दर्शाता है कि वे विद्युत की आपूर्ति को सुगम बनाती हैं। लॉर्ड डिपलॉक ने निष्पक्षता या युक्तिसंगतता पर विचार करते हुए *श्रोडर म्यूजिक कंपनी लिमिटेड बनाम मैकाले*, [1974] 3 ऑल ई.आर. 616 (624) में कहा: “यदि आप ये वस्तुएँ या सेवाएँ चाहते हैं तो यही एकमात्र शर्तें हैं जिन पर वे उपलब्ध हैं। स्वीकार करें या छोड़ दें।” यह ऐसा अनुबंध है जिसमें शर्तें एक पक्ष द्वारा पहले से निर्धारित की जाती हैं और दूसरे पक्ष द्वारा स्वीकार किए जाने के लिए खुली रहती हैं। ऐसा अनुबंध, जिसमें स्वीकृति के लिए प्रस्तुत की गई अनेक शर्तें होती हैं और जिन पर चर्चा का अवसर नहीं होता, विधि में एक स्थापित प्रकार का अनुबंध है कि जो व्यक्ति किसी दस्तावेज़ पर हस्ताक्षर करता है, जिसमें संविदात्मक शर्तें निहित हैं, वह सामान्यतः उससे बंधा होता है, भले ही उसने उसे पढ़ा न हो, और भले ही वह उसके सटीक विधिक प्रभाव से अनभिज्ञ हो। खंड 4 के दृष्टिगत, जो अन्य शर्तों के साथ अनुबंध का एक अंग है, इसे *बिना प्रतिफल के नहीं कहा जा सकता और न ही बिना किसी प्रतिफल के मात्र मौखिक समझौते से कोई कानूनी दायित्व उत्पन्न नहीं होता* का सिद्धांत लागू होता है। युक्तिसंगतता की कसौटी पर भी इसे अविवेकपूर्ण नहीं कहा जा सकता, क्योंकि उपभोक्ता को विद्युत आपूर्ति में बोर्ड द्वारा किए जाने वाले अधिरोपण स्थापना व्यय सम्मिलित होते हैं, जो उपभोग की गई विद्युत की मात्रा के अनुसार परिवर्तित नहीं होते तथा स्थापना को इस बात की परवाह किए बिना बनाए रखना होता है कि ऊर्जा का उपभोग हो रहा है या नहीं, जब तक कि अनुबंध समाप्त न हो जाए। प्रत्येक अनुबंध का उसके उद्देश्य के संदर्भ में मूल्यांकन किया जाना चाहिए और उसकी समस्त शर्तों के समग्र परिप्रेक्ष्य को ध्यान में रखते हुए पक्षकारों की मंशा का निर्धारण किया जाना चाहिए, भले ही तत्काल विचार का विषय किसी एक पृथक उपबंध का अर्थ ही क्यों न हो। इस प्रकार न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क के उपबंध वाला यह अनुबंध केवल इस आधार पर *अधिकारातीत* नहीं माना जा सकता कि यह वैधानिक कर्तव्य के प्रतिकूल है। इस संविदात्मक तत्व एवं वैधानिक कर्तव्य के मध्य भेद को ध्यान में रखना आवश्यक है। उपभोक्ता के साथ किया गया आपूर्ति अनुबंध मुख्यतः संविदात्मक प्रकृति का होता है, यद्यपि आपूर्ति का आधार वैधानिक होता है। ऐसे मामलों में यह माना जाता है कि अनुबंध की शर्तें उपभोक्ता और बोर्ड के बीच विचार-विमर्श के पश्चात

निर्धारित की गई हैं और जब तक विशेष रूप से निर्दिष्ट न हो, अनुबंध सामान्यतः उसी उपभोक्ता को प्रभावित करता है जिसके साथ वह किया गया है, जैसा कि *नॉर्दर्न ऑटोरियो पावर कंपनी लिमिटेड बनाम ला रोश माइन्स लिमिटेड*, [1938] 3 ऑल ई.आर. 755 में प्रतिपादित किया गया है।

उपरोक्त कारणों के आधार पर, हमें यह निर्णय देने में कोई संकोच नहीं है कि यह समझौता युक्तिसंगत और वैध था, और यह 28 सितंबर 1981 को बोर्ड द्वारा उत्तरदाता फर्म की आपूर्ति के विच्छेदन से समाप्त नहीं हुआ, बल्कि केवल समझौते की धारा 9(ख) की शर्तों के अनुसार—जैसा कि ऊपर चर्चा की गई है—समाप्त हुआ। अतः न्यूनतम सुनिश्चित शुल्क का भुगतान करने की देयता अनुबंध के निर्धारण तक जारी रही। इसलिए बोर्ड विधि के अनुसार उस आधार पर बिल प्रस्तुत करने, मांग करने और उसकी वसूली करने का अधिकारी था।

परिणामस्वरूप, आक्षेपित निर्णय अपास्त किया जाता है और अपील स्वीकार की जाती है। लागत के संबंध में कोई आदेश नहीं।

वाई. लाल

अपील स्वीकार की गई।

खंडन (डिस्क्लेमर)- स्थानीय भाषा में निर्णय के अनुवाद का आशय, पक्षकारों को इसे अपनी भाषा में समझने के उपयोग तक ही सीमित है और अन्य प्रयोजनार्थ इसका उपयोग नहीं किया जा सकता। समस्त व्यवहारिक, कार्यालयी, न्यायिक एवं सरकारी प्रयोजनार्थ, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रमाणिक होगा साथ ही निष्पादन तथा कार्यान्वयन के प्रयोजनार्थ अनुमान्य होगा।